International Journal of Enhanced Research in Educational Development
ISSN: 2320-8708, Vol. 3 Issue 6, November-December, 2015

हिंदी साहित्य इतिहास दर्शन

मोनिया दीक्षित

हिंदी विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय रोहतक, हरियाणा

सार

हिन्दी के आरंभिक काल से लेकर आधुनिक व आज की भाषा में आधुनिकोत्तर काल तक साहित्य इतिहास लेखकों के शताधिक नाम गिनाये जा सकते हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास को शब्दबद्ध करने का प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण था। हिन्दी साहित्य के इतिहास–लेखन का कार्य विभिन्न कालों में किसी न किसी रूप में अवश्य मिलता है।

परिचय

इतिहासकार या किसी द्रष्टा की चेतना में इतिहास की घटनाएं जिस रूप में प्रतिबिंबित होती हैं, उसे इतिहास दर्शन कहते हैं। यह अनिवार्यतः चेतना के इतिहास रूपी प्रक्रिया की एक अवस्था है। दूसरे शब्दों में इतिहासकार अतीत की घटनाओं और तथ्यों का प्रयोग किस तरह से करता है, यह उसके इतिहासबोध पर निर्भर करता है। इतिहास दर्शन अतीत की मूल चेतना एवं उपलब्धियों पर बल देता है और वर्तमान के साथ संवाद स्थापित करता है। इसी संबंध में ई०एच० कार ने कहा था कि, ष्इतिहास, इतिहासकार और उसके तथ्यों की क्रिया–प्रतिक्रिया की एक अनवरत प्रक्रिया है, अतीत और वर्तमान के बीच एक अंतहीन संवाद है।ष्ध्३, यह एक ओर विश्लेषणात्मक एवं तर्कपूर्ण विवेचन करता है तो दूसरी ओर संश्लिष्ट प्रभाव का भी सृजन करता है।

साहित्य का इतिहास दर्शन साहित्य को देखने का एक नजरिया है । अनुशासन के रूप में इसका विकास साहित्य के बारे में रूपवादी और संरचनावादी दृष्टिकोण के विरोध में हुआ क्योंकि ये दृष्टिकोण साहित्यिक रचना को रचनाकार अर्थात लेखक और उसके ग्रहीता अर्थात पाठक से पूरी तरह अलगाकर उसे स्वायत्त 'पाठ' में बदल देते हैं । किसी कृति के अर्थ को खोलने के लिए ये दृष्टियां समाज और इतिहास का हस्तक्षेप जरूरी नहीं मानतीं और इसके लिए केवल अन्य पाठों का संदर्भ ग्रहण करने पर जोर देती हैं । हालांकि कलावाद अनिवार्य तौर पर इतिहास का विरोध नहीं करता, बल्कि इतिहास को ही अपने में ढाल लेता है । कला के प्रसिद्ध सामाजिक इतिहासकार आर्नल्ड हाउजर ने 'कला का इतिहास दर्शन' में अलाइस रीग्ल और हाइनरिह वोल्फ्लिन नामक दो जर्मन विचारकों के मतों का उल्लेख किया है जो मानते थे कि कला का इतिहास बिना नाम के लिखा जा सकता है क्योंकि विकास तो कला की तकनीकों का होता है । कला की इन तकनीकों में होने वाले बदलावों में एक पैटर्न होता है और वह पैटर्न ही उसका इतिहास है । इसके लिए वे विकास की जगह उद्विकास की धारणा प्रस्तावित करते हैं जिसमें वनस्पतियों के विकास की तरह कला के विकास में भी आंतरिक गुणों की वृद्धि ही दिखाई पड़ती है, बाहरी परिस्थितियों का प्रभाव प्रत्यक्ष नहीं होता । इसके विरोध में हाउजर इतिहास की ऐसी

धारणा का पक्ष लेते हैं जिसमें आंतरिक तर्क से विकास तो हो ही, युगांतरकारी बदलावों के कारक कला के भीतर की तकनीकों की जगह बाहरी समाज में होने वाले परिवर्तनों के प्रभाव हों ।

जब भी इतिहास लिखा जाता था तो इतिहास लेखक उसे वृत्तांत से अलगाने के लिए अलग अलग घटनाओं को आपस में जोड़ने का कोई न कोई ढाँचा बनाते थे लेकिन उसे अलग से सूत्रबद्ध करने की जरूरत उन्हें नहीं महसूस होती थी । जर्मन दार्शनिक हेगेल ने इसे पहली बार व्यवस्थित किया । उन्होंने माना कि असली इतिहास विचारों का होता है और मानव समाज किसी न किसी परम विचार को अमली जामा पहनाने के लिए प्रयासरत रहता है । इसी क्रम में इतिहास आगे बढ़ता है यानी 'प्रगति' होती है । इसी आधार पर उन्होंने विचारों का विकास रुक जाने पर उसे 'इतिहास का अंत' कहा । दर्शन का एक अंग सौंदर्यशास्त्र माना जाता है और इसीलिए सभी दार्शनिक सौंदर्यशास्त्र पर भी लिखते हैं । हेगेल ने भी 'हाइडेलबर्ग लेक्चर्स आन ऐस्थेटिक्स' शीर्षक पुस्तक लिखी जिसमें सौंदर्यशास्त्र के अंग के बतौर साहित्य के कुछेक सवालों पर प्रकाश डाला गया है । उदाहरण के लिए आधुनिक काल में पुनर्जागरण के बाद जन्मी मानव समाज की विवेक दृष्टि से उन्होंने गद्य के उदय को जोड़ा है । उनका कहना था कि आधुनिक काल की तर्कणा की अभिव्यक्ति गद्य में ही संभव है । इसी तरह उन्होंने उपन्यास को 'मध्य वर्ग का महाकाव्य' कहा था । हिंदी में आम तौर पर इस परिभाषा की व्याख्या करते हुए 'मध्य वर्ग' का वही अर्थ समझा जाता है जो इस समय प्रचलित है जबकि हेगेल के समय इसका मतलब उभरता हुआ शहरी बुर्जुआ वर्ग होता था । अर्थात इस परिभाषा के अनुसार उपन्यास उभरते हुए बुर्जुआ वर्ग का महाकाव्य है । साहित्य का माध्यम भाषाएं होती हैं । इनके भी उत्थान पतन को व्यापक ऐतिहासिक बदलावों के संदर्भ में ही समझा जा सकता है अन्यथा कुछ भाषाओं को आधुनिक कहना संभव नहीं होता, न ही कुछ को प्राचीन । साहित्य की भाषा के रूप में किसी भाषा की जगह दूसरी भाषा के आगमन के पीछे भाषा में निहित कोई गुण नहीं होता, बल्कि अनेक साहित्येतर अर्थ–राजनीतिक कारण होते हैं ।

रामचंद्र शुक्ल ने साहित्येतिहास की परिभाषा देते हुए शहिंदी साहित्य का इतिहासश में लिखा है, ष्जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही श्साहित्य का इतिहासश कहलाता है। जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है। अतः कारणस्वरूप इन परिस्थितियों का किंचित् दिग्दर्शन भी साथ ही साथ आवश्यक होता है।ष्[४], इस रूप में देखें तो साहित्य का इतिहास अतीत में लिखे गए साहित्य या साहित्यकारों का ब्यौरा मात्र नहीं है। यह अतीत की किसी रचना को अपने युग के यथार्थ के प्रतिबिंबन का केवल साधन मात्र नहीं है। साहित्य के इतिहास का आधार है–साहित्य के विकासशील स्वरूप की धारणा। आशय यह कि साहित्य के इतिहास में साहित्य की विकासमान परंपरा, उसके उद्भव से आज तक की स्थिति का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। श्साहित्य और इतिहास दृष्टिश में मैनेजर पांडेय साहित्य और इतिहास के अंतःसंबंधों पर लिखते हैं, ष्साहित्यिक रचनाएं इतिहास के भीतर होती हैं और इतिहास का निर्माण भी करती हैं। रचना का अस्तित्व इतिहास के भीतर होता है, इतिहास के बाहर नहीं। कृतियों की उत्पत्ति में इतिहास की सक्रिय भूमिका होती है और पाठकों द्वारा उनके अनुभव तथा मूल्यांकन का इतिहास उनके जीवन का इतिहास होता है। कलाकृतियाँ अपने सामाजिक संदर्भ की उपज होती हैं, लेकिन महत्वपूर्ण कलाकृतियां अपने संदर्भ से परे भी सार्थक सिद्ध होती हैं।ष्[५], इसलिए किसी भी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए उससे संबंधित जातीय परंपराओं, राष्ट्रीय और सामाजिक स्थितियों और परस्थितियों को समझना आवश्यक है।

आरंभिक काल

आरंभिक काल में मात्र कवियों के सूची संग्रह को इतिहास रूप में प्रस्तुत कर दिया गया। भक्तमाल आदि ग्रन्थों में यदि भक्त कवियों का विवरण दिया भी गया तो धार्मिक दृष्टिकोण तथा श्रद्धातिरेक की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त उसकी और कुछ उपलब्धि नहीं रही। 19वीं सदी में ही हिन्दी भाषा और साहित्य दोनों के विकास की रूपरेखा स्पष्ट करने के प्रयास होने लगे। प्रारंभ में निबंधों में भाषा और साहित्य का मूल्यांकन किया गया जिसे एक अर्थ में साहित्य के इतिहास की प्रस्तुति के रूप में भी स्वीकार किया गया। डॉ० रूपचंद पारीक, गार्सा–द–तासी के ग्रन्थ इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐन्दूई ऐन्दूस्तानी को हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास मानते हैं। उन्होंने लिखा है – हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास लेखक गार्सा–द–तासी हैं, इसमें संदेह नहीं है। परंतु डॉ० किशोरीलाल गुप्त का मंतव्य है– तासी ने अपने ग्रन्थ को शहिन्दुई और हिन्दुस्तानी साहित्य का इतिहासश कहा है, पर यह इतिहास नहीं हैं, क्योंकि इसमें न तो कवियों का विवरण काल क्रमानुसार दिया गया है, न काल विभाग किया गया है और अब काल विभाग ही नहीं है तो प्रवृत्ति निरूपण की आशा ही कैसे की जा सकती है।

वैसे तासी और सरोज को हिन्दी साहित्य का प्रथम और द्वितीय इतिहास मानने वालों की संख्या अल्प नहीं है परंतु डॉ० गुप्त का विचार है कि ग्रियर्सन का द माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास है। डॉ० रामकुमार वर्मा ने इसके विपरीत अनुसंधानात्मक प्रवृत्ति की दृष्टि से तासी के प्रयास को अधिक महत्वपूर्ण निरूपित किया है।

पाश्चात्य और प्राच्य विद्वानों ने हिन्दी के इतिहास लेखन के आरंभिक काल में प्रशंसनीय भूमिका निभाई है। शिवसिंह सरोज साहित्य इतिहास लेखन के अनन्य सूत्र हैं। हिन्दी के वे पहले विद्वान हैं जिन्होंने हिन्दी साहित्य की परंपरा के सातत्य पर समदृष्टि डाली है। अनन्तर मिश्र बंधुओं ने साहित्यिक इतिहास तथा राजनीतिक परिस्थितियों के पारस्परिक संबंधों का दर्शन कराया। डॉ० सुमन राजे के शब्दों में – काल विभाजन की दृष्टि से भी मिश्रबंधु विनोद प्रगति की दिशा में बढ़ता दिखाई देता है।

आधुनिक काल

वर्तमान युग में आचार्य द्विवेदी के अतिरिक्त साहित्येतिहास लेखन में अन्य प्रयास भी हुए परंतु इस दिशा में विकास को अपेक्षित गति नहीं मिल पाई। वैसे डॉ० गणपति चंद्र गुप्त, डॉ० रामखेलावन पांडेय के अतिरिक्त डॉ० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, डॉ० कृष्णलाल, भोलानाथ तथा डॉ० शिवकुमार की कृतियों के अतिरिक्त काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य का इतिहास एवं डॉ नगेन्द्र के संपादन में प्रकाशित हिन्दी साहित्य का इतिहास आधुनिक युग की उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हैं। हरमहेन्द्र सिंह बेदी ने भी हिन्दी साहित्येतिहास दर्शन की भूमिका लिखकर साहित्य के इतिहास और उसके प्रति दार्शनिक दृष्टि को नये ढंग से रेखांकित किया है।

नया युग

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य का प्रथम व्यवस्थित इतिहास लिखकर एक नये युग का समारंभ किया। उन्होंने लोकमंगल व लोक–धर्म की कसौटी पर कवियों और कवि–कर्म की परख की और लोक चेतना की दृष्टि से उनके साहित्यिक अवदान की समीक्षा की। यहीं से काल विभाजन और साहित्य इतिहास के नामकरण की सुदृढ़ परंपरा का आरंभ हुआ। इस युग में डॉ० श्याम सुन्दर दास, रमाशंकर शुक्ल श्रसालश, सूर्यकांत शास्त्री, अयोध्या सिंह उपाध्याय, डॉ० रामकुमार वर्मा, राजनाथ शर्मा प्रभृति विद्वानों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास विषयक ग्रन्थों का प्रणयन कर स्तुत्य योगदान दिया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने शुक्ल युग के इतिहास लेखन के अभावों का गहराई से अध्ययन किया और हिन्दी साहित्य की भूमिका (1940 ई.), हिन्दी साहित्य का आदिकाल (1952 ई.) और

हिन्दी साहित्यय उद्भव और विकास (1955 ई.) आदि ग्रन्थ लिखकर उस अभाव की पूर्ति की। काल विभाजन में उन्होंने कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया। शैली की समग्रता उनकी अलग विशेषता है।

निष्कर्ष

साहित्य के इतिहास दर्शन के अनेक अर्थ ग्रहण किए जा सकते हैं । एक अर्थ तो ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में साहित्य का अध्ययन है । यही अर्थ सबसे अधिक मान्य है । लेकिन इसका एक अर्थ इतिहास के ऐसे लेखन का अध्ययन भी हो सकता है जो साहित्य के अधिक नजदीक हो । इस नजरिए से देखने पर इसका आयाम विस्तृत हो जाता है । इसी प्रसंग में एक और प्रश्न उठाया जाता रहा है कि साहित्य के इतिहास की मुख्य प्रकृति साहित्यिक होती है या ऐतिहासिक । यह सवाल केवल अकादमिक नहीं है और लंबे व्यावहारिक लेखन से साबित हुआ है कि इस अनुशासन में रुचि साहित्य के विचारकों की अधिक रही है, इतिहासकारों की उतनी नहीं रही है । लेकिन हाल के दिनों में इतिहास के भीतर ही उत्तर आधुनिकता के उदय ने ऐसी संभावना पैदा की है कि साहित्य केवल इतिहास का स्रोत ही न रह जाए और विधाओं के बीच की आवाजाही की तरह अनुशासनों के बीच भी आवाजाही पैदा हो।

संदर्भ

1. मैनेजर पांडेय, साहित्य और इतिहास दृष्टि, वाणी प्रकाशन,
2. ई०एच० कार, इतिहास क्या है, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड,
3. नलिन विलोचन शर्मा रचना संचयन, चयन एवं संपादन–गोपेश्वर सिंह, साहित्य अकादमी
4. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रकाशन संस्थान।